ज्ञान का सूरज

सच का उजाला

अनन्त की यात्रा

निजानंद संप्रदाय

(श्री कृष्ण प्रणामी धर्म)

एवं

श्री 5 पद्मावतीपुरी धाम

पन्ना के प्रतिष्ठित मंदिर

एक संक्षिप्त परिचय

श्री निजानंद संप्रदाय

(श्रीकृष्ण प्रणामी धर्म)

धर्मप्रेमी सज्जनो,

सृष्टि के प्रारंभ से ही मनुष्य में यह जानने की जिज्ञासा रही है कि मैं कौन हूँ ? कहाँ से आया हूँ ? इस सृष्टि का निर्माता कौन है ? वह सच्चिदानंद परब्रह्म कहाँ है ? कैसा है ? और वह कैसे प्राप्त होता है ? मनीषी जनों ने इन प्रश्नों का यथावत् जवाब पाने का भरसक प्रयास किया, किन्तु तारतम ज्ञान के अभाव में किसी को भी उसकी प्राप्ति का आँखों देखा सही उत्तर न मिल सका।

इस तारतम ज्ञान (ब्रह्मवाणी) को लाने वाले पूर्णब्रह्म स्वरूप श्री प्राणनाथ जी हैं जिन्होंने श्री मेहराज ठाकुर के कलेवर में विराजमान होकर लीला की । पुराण संहिता में इस संबंध में कहा गया है –

सुन्दरी च इन्दिरा नामाभ्यां चन्द्रसूर्ययोः । मायान्धकार विनाशाय भविष्यतः कलौयुगे ।।

अर्थात् कलियुग में माया रूपी अज्ञानांधकार को दूर करने के लिये दिव्य परमधाम की दो आत्मायें सुन्दरी (सुन्दरबाई–श्यामाजी) और इन्दिरा (इन्द्रावती) दो शरीरों को धारण करेंगी, जिनके कार्य क्रमशः चन्द्र और सूर्य के प्रकाश रूप होंगे। इन दोनों कलेवरों में परब्रह्म विराजमान होकर लीला करेंगे । ये ही दो महाप्रभु क्रमशः धनी श्री देवचन्द्र जी (1581–1655 ई.) और महाप्रभु श्री मेहराज ठाकुर (1618–1694 ई.) पूर्णब्रह्म के अवतार हुए। धर्मग्रंथों में इन्हें ही 'बुद्धावतार' और 'विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक अवतार' कहा गया है। बुद्धगीता में कहा गया है–

अक्षरातीत एषो वै पुरुषो बुद्ध उच्यते । तेजोमयादिरूपश्च तस्यावतार उच्यते ।।

ये विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक स्वरूप श्री प्राणनाथ जी (श्री मेहराज ठाकुर) ही उस तेजोमय उत्तम पुरुष अक्षरातीत के प्रगट स्वरूप हैं । प्राणनाथ किसी मानव शरीर का नाम नहीं है, अपितु सच्चिदानंद परब्रह्म को ही प्राणपति (प्राणनाथ) कहते हैं– ''तुम हो एक अगोचर सबके प्राणपति ।''

जब श्री मेहराज के देह में अक्षरातीत परब्रह्म विराजमान हो गये, तो इन्हें ही प्राणनाथ कहा गया । इस संबंध में भविष्योत्तर पुराण अध्याय 72 ब्रह्मखण्ड में कहा गया है कि –

विक्रमस्य गतेऽब्दे सप्तदशाष्टत्रिंश यदा । तदायं सच्चिदानंदो हि अक्षरात्परतः परः ।।
भारते च इन्दिरायां स बुद्ध आविर्भविष्यति । स बुद्ध कल्किरूपेण क्षात्रधर्मेण तत्परः ।
चित्रकूटे वने रम्ये विजयाभिनन्दनो भवेत् ।।

अर्थात् विक्रम संवत् 1738 में (संवत 1735 से उदयमान) अक्षर से परे वह सच्चिदानंद परब्रह्म भारत वर्ष में परमधाम की श्री इन्द्रावती जी की आत्मा में श्री विजयाभिनन्द बुद्धनिष्कलंक स्वरूप में चित्रकूट के रमणीय वन (श्री 5 पद्मावतीपुरी) पन्ना विंध्याचल में प्रगट होंगे । सुन्दरी तंत्र में कहा गया है –

पद्मावती केन शरदे विन्ध्यपृष्ठे विराजिता । इन्दिरा नाम सा देवी भविष्यति कलौ युगे ।।

अर्थात् पद्मावती (किलकिला नदी और केन नदी के मध्य) विन्ध्याचल की धरती पर इन्द्रावती की आत्मा में परब्रह्म प्रकट होकर लीला करेंगे –

नदी किलकिला तीर पे, उतरे परमहंस आए । तिनमें सिरदार अक्षरातीत, देख अपना ठौर सुख पाए ।।

महाराजा छत्रसाल जी ने श्री प्राणनाथ जी को पूर्णब्रह्म के रूप में पहचाना तथा महारानियों समेत सपरिवार उनकी आरती उतारी । ''बीतक'' ग्रंथ की निम्नांकित चौपाइयाँ देखें–

चौपड़े की हवेली मिने, तहाँ पधराये श्री राज । चले आप सुखपाल ले, काँध पर कुँवर महाराज ।।
साथ समस्त के बीच में, जुगल धनी बैठाए । कही तुम साक्षात अक्षरातीत हो, हम चीन्हे तुम्हें बनाए ।।
श्री ठकुरानी जी संग ले, पधारे मेरे घर । धनी बिना तुम्हें और जो देखे, सो नहीं मिसल मातबर ।।

यह वही पूर्णब्रह्म का स्वरूप है, जिसके लिये दुनिया युगों–युगों से बाट देख रही थी ।

प्रगटे पूर्णब्रह्म सकल में, ब्रह्मसृष्टि सिरदार ।

ईश्वरी सृष्टि और जीव की, सब आए करो दीदार ।। सुनियो दुनिया आखरी, भाग बड़े हैं तुम ।
जो कबूं कानों ना सुनी, सो करो दीदार खसम ।। कई देव दानव हो गये, कई तीर्थंकर अवतार ।
किन सपनों ना श्रवनों, सो इत मिल्या नर नार ।।

श्री प्राणनाथ जी वे ही अक्षरातीत परब्रह्म हैं, जिनके विषय में मुण्डकोपनिषद् में 'अक्षरात्परतः परः' और गीत 15-17 में 'उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः' कहा गया है । इन्हीं परब्रह्म के विषय में रामायण के बालकाण में कहा गया है कि-

नेति नेति जेहि वेद निरूपा, निजानंद निरुपाधि अनूपा । शंभु विरंचि विष्णु भगवाना, उपजहिं जासु अंश ते नाना

देवी भागवत 4/19/2 में कहा गया है-

अहं ब्रह्मा अहं विष्णुः शिवोहमिति मोहिता । न जानिमो वयं धातः परं वस्तु सनातनम् ।।

अर्थात् मैं ब्रह्मा हूँ, मैं विष्णु हूँ तथा मैं शिव हूँ, इस प्रकार हम लोग माया से मोहित हो रहे हैं । उस सनात सच्चिदानंद परब्रह्म को हम नहीं जानते हैं ।

संख्या चेद्रजसामस्ति न विश्वानां कदाचन । तथा ब्रह्मा विष्णु शिवादीनां संख्या न विद्यते ।।

अर्थात् धूल के कणों की संख्या कदाचित गिनी जा सकती है, किन्तु असंख्य ब्रह्माण्डों और उनमें रहने वा ब्रह्मा, विष्णु तथा शिवादि देवों की संख्या को नहीं गिना जा सकता है।

यं ब्रह्मावरुणेन्द्र रूद्र मरुतस्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवैः । वेदैः सांगपदक्रमोपनिषदैः गायन्ति यं सामगाः ।।
ध्यानावस्थित तद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो । यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणाः देवाय तस्मै नमः ।।

जिस सच्चिदानंद परब्रह्म की ब्रह्मा, वरुण, रूद्र, इन्द्र, वायु इत्यादि देवगण दिव्य स्तुतियों से स्तवन करते हैं सामवेद के गायक जिसका गायन करते हैं, योगी लोग ध्यान में स्थित होकर जिसका साक्षात्कार करते हैं, जिसक अन्त न तो देवता जानते हैं और न असुर, उस अक्षरातीत सच्चिदानंद परब्रह्म को प्रणाम है ।

ऐतरेयोपनिषद् में कहा गया है- 'एकमेवाद्वितीयम्' अर्थात् परब्रह्म एक ही है और उसके समान अन्य कोई नहीं है ।

श्री प्राणनाथ जी वही अक्षरातीत हैं जिनके प्रगटन के संबंध में पुराण संहिता में कहा गया है-

कलिः धन्यः कलिः धन्यः कलिः धन्यः महेश्वरः । यत्र ब्रह्मप्रियाणाम् च वासना समुपाविशन् ।।

यह अट्ठाईसवां कलियुग धन्य है, जिसमें परब्रह्म श्री प्राणनाथ जी अपनी ब्रह्मप्रियाओं के साथ प्रगट हुये हैं ।

उपरोक्त कथन जिन श्री प्राणनाथ जी के विषय में कहे गये हैं उनका प्रगटन आश्विन कृष्ण चतुर्दशी वि. सं 1675 को जामनगर (गुजरात) में हुआ था ।

यह पन्ना नगर श्री प्राणनाथ जी की प्रेरणा से आज से 332 वर्ष पूर्व स्थापित हुआ है । श्री प्राणनाथ जी की वाणी संसार के सभी लोगों को एक सत्य की राह पर चलने के लिये प्रेरित करती है । उनके निम्नांकित वचन देखें :-

जो कुछ कह्या कतेब ने, सोई कह्या वेद । दोऊं वंदे एक साहब के, पर लड़त बिना पाये भेद ।।
पारब्रह्म तो पूरन एक है, ए तो अनेक परमेश्वर कहावें । अनेक पंथ जुदे जुदे, और सब कोई सास्त्र बोलावें ।
पार पुरुष पिया एक है, नाहिन दूजा कोए । और नार सब माया, यामें भी विध दोए ।।

अतः सभी धर्मप्रेमी सज्जनों से निवेदन है कि पूर्णब्रह्म श्री प्राणनाथ जी के स्वरूप को पहिचान कर अप जीवन को सार्थक बनायें ।

श्री निजानन्द सम्प्रदाय-श्री कृष्ण प्रणामी धर्म का संक्षिप्त इतिहास

उमरकोट (मारवाड़) में अवतरित श्री देवचन्द्र जी (सन् 1581-1655) ने उस समय प्रचलित सभी धार्मिक मतों का विस्तृत अध्ययन किया एवं विभिन्न साधना पद्धतियों को अपनाते और छोड़ते हुए सत्य की खोज की जामनगर में आपने 14 वर्षों तक निष्ठापूर्वक श्री मद्भागवत महाग्रंथ का चिंतन-मनन किया। अंत में आपको पराप्रेम लक्षणा भक्ति द्वारा पूर्णब्रह्म परमात्मा श्री कृष्ण जी के साक्षात दर्शन हुये और महत्वपूर्ण वार्ता उपरांत वे श्री देवचन्द्र जी के अंतःकरण में प्रविष्ट हुए । तत्पश्चात श्री देवचन्द्र जी ''निजानंद स्वामी''कहलाये । क्योंकि आपने निजबोध द्वारा पूर्णब्रह्म श्री कृष्ण को पाया था, इसलिए आपके अनन्य परा प्रेमलक्षणा भक्ति-मार्ग का नामकरण हुआ- 'निजानंद संप्रदाय', जो कालांतर में श्री कृष्ण प्रणामी धर्म कहलाया।

जामनगर गुजरात में श्री मेहराज ठाकुर का प्राकट्य सन् 1618 में हुआ । वे किशोर अवस्था में ही श्री निजानंद स्वामी के अनन्य शिष्य हुए । निजानंद स्वामी से दीक्षा लेने के पश्चात सतत् साधना के फलस्वरूप आपको भी निजबोध हुआ । निजानंद सद्गुरु जिनके अंतःकरण में स्वयं अक्षरातीत श्री कृष्ण विराजमान थे, ने सन् 1655 ई. में अपना नश्वर शरीर छोड़ा और वे सूक्ष्म रूप में पूर्णब्रह्म श्री कृष्ण की समस्त शक्तियों सहित श्री मेहराज ठाकुर के अंतःकरण में समाहित हुए । महामति प्राणनाथ ने अपने धर्म जागरण अभियान के अंतर्गत देश-विदेश की यात्रायें करते हुये ब्रह्ममुनियों को निजबोध कराकर जागृत किया । आत्म जागृति की अलख जगाते हुए आप अपने पाँच हजार साथियों के साथ बुंदेलखण्ड, पन्ना पधारे । यहाँ नरवीर केशरी छत्रसाल आपके ब्रह्मबोध से प्रभावित होकर जागृत हुये और आपके शिष्य बने ।

बुंदेलखण्ड पन्ना में अपने सुन्दरसाथ सहित आप यहीं बस गये । सन् 1694 ई. में श्रावण शुक्ल चतुर्थी को आपने अपने आप को ब्रह्मलीन किया । इस प्रकार मेहराज ठाकुर, महामति प्राणनाथ होकर पूर्णब्रह्म परमात्मा के रूप में सबके प्राणों के नाथ अर्थात प्राणनाथ कहलाये। उनके जीवन काल में ही श्री बंगला जी एवं श्री गुम्मट जी नामक प्रमुख दो मंदिरों का निर्माण हो चुका था, जिनमें वे अपने साथ आये सुन्दरसाथ सहित छत्रसाल एवं राज्य की प्रजा को धर्म उपदेश दिया करते थे । महामति प्राणनाथ साक्षात् पूर्णब्रह्म स्वरूप थे। अतः यह स्थान निजधाम कहलाया। उनके इस दिव्य धाम में बसने वाले लोग धामी कहलाए । तभी से यह स्थान 'मुक्तिपीठ' के रूप में विख्यात है । निजानंद स्वामी से आरंभ होकर पराप्रेम लक्षणा भक्ति की यह धारा 'निजानंद संप्रदाय' या 'श्री कृष्ण प्रणामी' धर्म के रूप में महामति प्राणनाथ द्वारा सारे विश्व में प्रवाहित हुई । पन्ना (बुंदेलखण्ड) इस धारा का प्रमुख केन्द्र बना । यहाँ महामति प्राणनाथ जी के मुखारबिन्द से जोश द्वारा अवतरित ब्रह्मवाणी की 18758 चौपाइयों का ग्रंथ 'तारतम सागर' संकलित हुआ ।

निजानंद दर्शन में श्री कृष्ण अनादि अक्षरातीत पूर्णब्रह्म स्वरूप में आराध्य हैं जिन्हें सखीभाव के साथ पातिव्रत्य धर्म के अनुरूप पराप्रेम लक्षणा भक्ति द्वारा अपने हृदय में स्थापित करने का संकल्प है । इसी संकल्प का एक व्यावहारिक रूप है 'अष्ट प्रहर' की सेवा पूजा । यहाँ सेवा शब्द महत्वपूर्ण है, जिसमें यह विश्वास निहित है कि यहाँ पूर्णब्रह्म परमात्मा साक्षात विद्यमान हैं, जिनकी नित्य प्रति सेवा के साथ-साथ पूजा भी की जाती है । इस प्रकार निजानंद सद्गुरु श्री देवचंद्र जी द्वारा संस्थापित एवं महामति श्री प्राणनाथ द्वारा पूर्णरूप से विवेचित निजानंद संप्रदाय, प्रणामी धर्म के रूप में पराप्रेम लक्षणा भक्ति की अविरल धारा में पूरे विश्व को आप्लावित कर रहा है । इस समय विश्व भर में लगभग पाँच सौ श्री कृष्ण प्रणामी मंदिर और एक करोड़ से ज्यादा अनुयायी हैं । यह एक अवसर है, पूर्णब्रह्म की पराप्रेम लक्षणा भक्ति में अपने अहं को विसर्जित कर देने का । जो इस अवसर को चूक जाते हैं, वे लौट लौट कर फिर जगत में जन्म लेते हैं । इस अमूल्य अवसर के महत्व को जो लोग जान लेते हैं, वे अपना जीवन सार्थक करते हुए पूर्ण ब्रह्म परमात्मा के परमधाम को प्राप्त होते हैं । महामति श्री प्राणनाथ जी इस जगत में एक मात्र प्रेम को ही सर्वश्रेष्ठ मानते हैं इसलिए सभी सुधी जनों से उनका आग्रह है कि तमाम कर्मकाण्डों को छोड़कर, सच्चिदानंद स्वरूप अनादि अक्षरातीत श्री कृष्ण से प्रेम करते हुए परमपद को प्राप्त करें । वे कहते हैं -

'बड़ी मत सो कहिये ताये, श्री कृष्ण जी सों प्रेम उपजाये ।'

मुक्तिपीठ श्री गुम्मट जी मंदिर

इस मंदिर का निर्माण अनंत श्री विभूषित प्राणनाथ जी के समय सन् 1690-93 ई. में महाप्रभु के परमशिष्य महाराजा श्री छत्रसाल द्वारा कराया गया । महाप्रभु कभी इसी मंदिर में चिंतन करते थे और यहीं सन् 1694 ई. में ब्रह्मलीन हुये। निजानंद संप्रदाय में श्री प्राणनाथ जी के वाङ्मय स्वरूप ब्रह्मवाणी श्री तारतम सागर की अष्टप्रहर सेवा-पूजा होती है। अतः यहाँ सिंहासन पर ब्रह्मवाणी विराजमान है और उस पर सच्चिदानंद स्वरूप अनादि अक्षरातीत श्री कृष्ण की मुरली, मुकुट और वागे वस्त्रादि का श्रृंगार है ।

निजानंद दर्शन में महाप्रभु प्राणनाथ जी के मुखारबिन्द से अवतरित 'श्री तारतम सागर' में ही पूर्ण ब्रह्म परमात्मा की उपस्थिति मान्य है। श्री कृष्ण जी की गोकुल लीला एवं वृंदावन की रास लीला परमधाम से अवतरित 12000 सखियों के साथ ही की गई-मान्य है। इसी प्रकार महाप्रभु प्राणनाथ ने सुन्दरसाथ को 'तारतम सागर' सौंपकर कहा था कि तुम मुझे सदा इस ग्रंथ में पाओगे। इन दोनों स्मृति चिन्हों; तारतम सागर ग्रंथ एवं उसके साथ वंशी, मुकुट, वस्त्रादि को मिलाकर एक संपूर्ण विग्रह है, जिसमें महाप्रभु प्राणनाथ अर्थात पूर्णब्रह्म परमात्मा श्री कृष्ण की स्मृति विद्यमान है। क्योंकि महाप्रभु प्राणनाथ आत्म-जागृत अवस्था में स्वयं श्री कृष्णवत् हो गये थे इसलिए इस रसमय स्वरूप में हम महाप्रभु प्राणनाथ एवं अक्षरातीत परब्रह्म श्री कृष्ण को एक ही रूप में पाते हैं। इस भूमि को रास की पावन भूमि एवं ब्रजमण्डल की लीलाओं से जोड़कर स्मरण किया जाता है। अतः भक्तों में यह पूर्ण विश्वास है कि यहाँ पूर्णब्रह्म श्री कृष्ण एवं महाप्रभु प्राणनाथ एक ही स्वरूप में साक्षात उपस्थित हैं। इसलिए यहाँ सिर्फ पूजा नहीं अष्टप्रहर की सेवा-पूजा की जाती है, जिसमें यह माना जाता है कि प्रातःकाल से मध्य रात्रि तक हम अपने प्रीतम की सेवा और पूजा दोनों कर रहे हैं। कृष्ण भक्ति परंपरा के समस्त त्यौहार यहाँ इस भाव से मनाये जाते हैं, जैसे कि श्री कृष्ण स्वयं सखियों के साथ हर उत्सव और पर्व में शामिल हैं। इस मंदिर में कुछ देर शांत बैठकर उन स्मृतियों में सराबोर होकर अविस्मरणीय अनुभूति प्राप्त की जा सकती है।

श्री बंगला जी मंदिर

श्री बंगला जी मंदिर की स्थापना सन् 1683 ई. में अनन्त श्री प्राणनाथ जी द्वारा ही वर्तमान पन्ना नगर के आदि निर्माण के रूप में हुई थी। महाप्रभु के समय में यह श्री बंगला जी मंदिर काष्ठ एवं तृणाच्छादित था, जिसे महाराजा श्री छत्रसाल के पौत्र महाराज सभासिंह ने वर्तमान मूर्तरूप में निर्मित कराया। समय-समय पर महाप्रभु के शिष्य मंडल (सुंदरसाथ) ने अपने तन, मन और धन से इसे आधुनिक रूप प्रदान किया। श्री बंगला जी मंदिर में ही महाप्रभु प्राणनाथ अपने शिष्य समूह को ज्ञानोपदेश देते थे। अस्तु, यह संसद भवन के नाम से विख्यात है। उसी परंपरानुसार आज भी इस मंदिर में ब्रह्मवाणी की चर्चा, भजन-कीर्तन व पूजन होता है। इस मंदिर में चंदन की लकड़ी का वह आसन (तख्त) आज भी मौजूद है जिस पर आसीन होकर श्री प्राणनाथ जी धर्म उपदेश दिया करते थे। उसी ऐतिहासिक आसन पर उनके मुखारबिन्द से जोश द्वारा अवतरित 'तारतम सागर' ग्रंथ पर मुरली, मुकुट, वस्त्रादि धारण कराकर उनके वाङ्मय स्वरूप की अष्टप्रहर पूजा अर्चना होती है। यह मंदिर पूर्णब्रह्म परमात्मा का दरबार है, जहाँ भक्त अपनी विनय अर्जी मन ही मन निवेदित करते हैं। जन विश्वास है कि यहाँ से कोई निराश नहीं जाता। सच्चिदानंद स्वरूप श्रीजी सभी भक्तों की मनोकामनायें पूर्ण करते हैं। यहाँ भी श्री कृष्ण भक्ति परंपरा के सभी त्यौहार बड़ी धूमधाम से मनाये जाते हैं। विशेष रूप से शरदपूर्णिमा का पंचदिवसीय कार्यक्रम भव्य रूप में मनाया जाता है। तब यह संपूर्ण स्वरूप बगल में स्थित 'रास मण्डल' में एक विशाल शोभा यात्रा के साथ ले जाकर पधराया जाता है। जहाँ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पंचदिवसीय शरदपूर्णिमा महोत्सव संपन्न होता है। दूर-दूर से आये हुए विद्वान वक्ता धर्मोपदेश करते हैं एवं विभिन्न कलाकारों की मण्डलियाँ परंपरागत रास, नृत्य आदि प्रस्तुत करती हैं।

भक्त मुनियों के स्मृति-स्थल

महामति श्री प्राणनाथ जी के कुछ अनन्य भक्त ब्रह्ममुनियों ने स्मृति रूप में सदा अपने धामधनी के निकट रहने की इच्छा जाहिर की थी, वे चाहते थे कि उनकी सेवायें सदा महाप्रभु के चरणों में अर्पित रहें इसलिये उन्होंने ब्रह्मचबूतरे पर ही अपनी उपस्थिति मानी है। उनका यह विश्वास जन विश्वास में परिणत होकर इन गुमटियों के रूप में अक्षुण्ण है। इन स्मृति स्थलों में हम महाप्रभु के उन अनन्य शिष्यों को आज भी स्मरण करते हैं, स्वामी लालदास जी, स्वामी मुकुंद दास जी (इन्हें नवरंग स्वामी भी कहते हैं) सुशीला महारानी (मझली रानी) एवं महाराज मर्दन सिंह। इस प्रकार ब्रह्म चबूतरे की परिक्रमा में ये स्मृति स्थल (गुमटियाँ) सुनिश्चित हैं, जहाँ प्रतिदिन महाप्रभु के थाल भोग के पश्चात प्रसाद पहुँचाया जाता है।

आशीर्वाद का प्रतीक पंजा

यह विशाल परिसर जहाँ श्री गुम्मट जी एवं बंगला जी मंदिर स्थित है। इस संपूर्ण क्षेत्र को ब्रह्म चबूतरा कहते हैं। यहाँ महाप्रभु प्राणनाथ एवं उनके साथ आये भक्तगणों ने वर्षों तक पूर्णब्रह्म परमात्मा श्री कृष्ण की रसमय लीलाओं का संगीतमय गायन और मंचन किया है। यह तपो भूमि है, यहाँ विभिन्न ब्रह्ममुनियों ने अपनी साधना, तपस्या और भक्ति की चरम स्थिति में परम सत्य का अनुभव प्राप्त किया है। श्री मेहराज ठाकुर जब आत्म जागृति के पश्चात महामति प्राणनाथ हुये तब उनमें पूर्णब्रह्म परमात्मा द्वारा पाँच अलौकिक शक्तियाँ समाहित हुईं। इन्हीं पाँच शक्तियों का प्रतीक चिन्ह है स्वर्ण कलश के ऊपर स्थापित महाप्रभु श्री प्राणनाथ का आशीर्वाद सूचक पंजा, जिसे आदर सहित श्री पंजा साहिब भी कहते हैं। समस्त अलौकिक शक्तियों के साथ महाप्रभु श्री प्राणनाथ संपूर्ण जगत को आशीर्वाद प्रदान कर रहे हैं। इस पंजे का स्मरण करने से हमें परमात्मा की असीम छत्रछाया में सुरक्षित रहने का एहसास होता है। यह पूर्णब्रह्म परमात्मा की कृपा का प्रीतक है, जिसके दायरे में रहकर हम हर प्रकार की मुश्किलों और संघर्षों में विजयी होने का विश्वास प्राप्त करते हैं।

श्री लक्ष्मीदास जी का चमत्कारी कड़ा

महामति श्री प्राणनाथ जी के एक अनन्य शिष्य श्री लक्ष्मीदास (लच्छीदास) जी थे। उनके पास एक अनमोल पारसमणि थी, जिसके प्रभाव से वे महाप्रभु का यह दिव्य मंदिर, स्वर्ण मंदिर के रूप में बनाना चाहते थे। महाप्रभु ने एक दिन उन्हें समझाते हुए कहा कि भविष्य में लोगों की भावनायें विशुद्ध नहीं रह जायेंगी। इसलिए स्वर्ण मंदिर बनवाना ठीक नहीं होगा। लक्ष्मीदास जी का पारसमणि के प्रति मोह समाप्त नहीं हो पाया, वे उससे भव्य मंदिर बनवाकर यश कमाना चाहते थे। एक दिन महाप्रभु ने उनसे वह पारसमणि लेकर किलकिला नदी के कुण्ड में फेंक दी। इस घटना से लक्ष्मीदास जी अत्यंत दुखी हुये। लक्ष्मीदास जी का मोह भंग करने के लिए महाप्रभु प्राणनाथ ने अपनी आसनी उठा कर दिखाई, जहाँ सैकड़ों पारसमणियाँ बिखरी पड़ी थीं। यह देखकर लक्ष्मीदास जी के अंतःचक्षु खुल गये और उन्होंने महाप्रभु से कई बार क्षमा माँगी। महाप्रभु ने उनकी बाँह में पहने हुए लोहे के कड़े को उतरवाया, फिर उसे स्पर्श करके श्री गुम्मटजी मंदिर के पूर्वी द्वार पर लगवा दिया तथा लक्ष्मीदास जी को यह आशीर्वाद दिया कि तुम्हारी बाँह का यह लौह-कड़ा वह काम करेगा जो कोई भी स्वर्णाभूषण कभी नहीं कर सकता। यह कड़ा तब से त्रिताप नाशक है। कोई भी इस कड़े को अपने मस्तक से लगाकर, धूप दान देकर एवं स्नान कराकर वह जल ग्रहण करेगा तो उसके सभी प्रकार के कष्ट दूर हो जायेंगे। इस प्रकार दीन दुखियों के दुख दूर करके तुम्हारे नाम को जो यश मिलेगा वही यश अमर है, सार्थक है। तब से यह लौह-कड़ा लच्छीदास जी के चमत्कारी कड़े के रूप में प्रसिद्ध है।

सद्गुरु धनी श्री देवचंद्र जी का मंदिर

अनंत श्री विभूषित प्राणनाथ जी निजानंद सद्गुरु धनी श्री देवचंद्र जी (सन् 1581-1655) की गद्दी लेकर श्री 5 पद्मावतीपुरी आये, जिसकी सेवा का भार ब्रह्ममुनि जयंती काका को सौंपा गया। वह गद्दी सद्गुरु धनी श्री देवचंद्र जी के मंदिर में स्थापित की गई जहाँ अष्ट प्रहर सेवा पूजा होती है। श्री भूषणदास जी धामी द्वारा इस मंदिर को भव्य रूप प्रदान किया गया। वर्तमान में इस मंदिर का सौन्दर्यीकरण कर विशाल रूप दे दिया गया है।

श्री बाईजूराज का मंदिर

इस मंदिर की स्थापना सन् 1693 में अनंत श्री विभूषित महाप्रभु प्राणनाथ जी की अर्धांगिनी (तेजकुँवरि) श्यामा जी स्वरूपा श्री बाईजूराज की स्मृति में की गई । प्रणामी जगत में श्री बाईजूराज जी की राधिका स्वरूप में मान्यता है । अतः भादों शुक्ल अष्टमी को इस मंदिर में आपका प्रगटन महोत्सव वृहद रूप में मनाया जाता है। इस मंदिर का वृहदाकार रूप में निर्माण ब्रह्ममुनि वंशावतंश सेठ श्री भूषणदास धामी द्वारा किया गया। आज भी प्रणामी अनुयायी (सुन्दरसाथ) एवं अन्य भक्त जन अपनी मनोकामना पूर्ति के लिए यहाँ मान्यता करते हैं एवं मन वांछित फल प्राप्त करते हैं । इनकी महिमा अपरंपार है । यह एक जागृत स्थल है ।

पन्ना नगर का यह स्थल जहाँ निजानंद संप्रदाय (प्रणामी धर्म) के प्रमुख मंदिर स्थापित हैं, संपूर्ण परिक्षेत्र को पन्ना परमधाम अथवा श्री 5 पद्मावतीपुरी धाम भी कहते हैं । यहाँ ब्रज एवं रासलीला का अनवरत स्मरण किया जाता है। अतः राधिका महारानी मंदिर के पास का क्षेत्र बरसाना और गुम्मट-बंगला मंदिर के निकट का क्षेत्र ब्रज भूमि कहा जाता है । होली के अवसर पर इस भाव की स्पष्ट अनुभूति होती है । बाईजूराज महारानी के मंदिर में राधिका रानी जी की स्मृति के त्यौहार और बृजभूमि में श्री कृष्ण स्मृति के समस्त त्यौहार बड़ी धूमधाम से मनाये जाते हैं । पन्ना परमधाम, श्री 5 पद्मावतीपुरी धाम या मुक्तिपीठ निजानंद संप्रदाय का सबसे बड़ा तीर्थ है । जन विश्वास है कि यहाँ पूर्णब्रह्म श्री कृष्ण और उनकी शक्ति स्वरूपा श्यामा महारानी साक्षात विद्यमान हैं इसलिए इस परिक्षेत्र में उनकी अलग-अलग स्थापना है, मंदिर हैं और सेवापूजा है । इस क्षेत्र के बाहर जहाँ कहीं भी निजानंद संप्रदाय के मंदिर जो श्री कृष्ण प्रणामी मंदिर के रूप में जाने जाते हैं, स्थापित हैं- वहाँ सम्मिलित रूप से श्री युगलस्वरूप जुगल जोड़ी की सेवा पूजा होती है ।

चौपड़ा मंदिर

यह मंदिर वह पुण्य स्थल है जहाँ सन् 1683 में महाराज छत्रसाल ने अपने सद्गुरु श्री प्राणनाथ जी को पूर्णब्रह्म स्वरूप मानकर किलकिला नदी के अमराई घाट से उन्हें पालकी में बिठाकर अपने कंधों से लाकर पधराया था। यहाँ उन्होंने मुख्य द्वार से अपनी पाग व उनकी रानी ने साड़ी का पाँवड़ा बिछाकर महाप्रभु की प्रथम अगवानी कर आरती उतारी थी। यह महान तपोभूमि है, जहाँ कई ब्रह्ममुनियों ने पूर्णब्रह्म परमात्मा के साक्षात दर्शन किए हैं । इसी स्थल के पीछे स्थित हवेली में छत्रसाल जी के कुँवर हृदयशाह का जन्म हुआ था। मंदिर के समीप ही गंगा जमुना नाम के दो चौपड़े हैं जिनका जल पवित्र एवं स्वास्थ्यवर्धक है। इसका जल लोग बोतलों में भरकर विदेश भी ले जाते हैं। यह रमणीय वनस्थली आज भी मनमोहक व शांति प्रदान करने वाली है ।

यह भी उल्लेखनीय है कि इसी स्थान पर महाप्रभु श्री प्राणनाथ जी ने श्री छत्रसाल जी का राजतिलक किया था। महाराजा छत्रसाल ने भी समस्त राजाओं को इसकी सूचना भेजी थी कि अक्षरातीत परमात्मा ने मेरा राजतिलक किया है ।

खेजड़ा मंदिर

यह वह पुण्य स्थल है जहाँ खेजड़ा अर्थात् शमी के वृक्ष के नाम से मंदिर स्थित है। मान्यता है कि इस ऐतिहासिक स्थल पर सन् 1685 को विजय दशमी के दिन स्वामी प्राणनाथ ने छत्रसाल को हीरे का वरदान देते हुए बीड़ा उठवाया कि वे हमेशा अपनी प्रजा की खुशहाली और धर्मरक्षा के लिए कटिबद्ध रहेंगे। इस अवसर पर एक तलवार भेंट कर महाप्रभु ने महाराज छत्रसाल को सदा विजयी रहने का आशीर्वाद भी दिया था। उस समय महाराजा छत्रसाल ने महाप्रभु का स्मरण कर इस विजयी तलवार के बल पर कई पराक्रमी मुगल सेनापतियों को परास्त कर दिया था। इन्हीं स्मृतियों को संजोए हुए इस दिव्य स्थल पर उस समय जिस मंदिर का निर्माण हुआ उसे खेजड़ा मंदिर कहते हैं। शरदपूर्णिमा महोत्सव के दो दिन पूर्व अर्थात तेरस के दिन इस मंदिर से महाप्रभु श्री प्राणनाथ जी के सिंहासन की रथयात्रा स्वरूप सवारी बड़े धूमधाम से कई हजार सुन्दरसाथ के समूह के साथ गाते बजाते, स्थान-स्थान पर आरती उतारते हुए निकलती है। यह सवारी श्री बंगला जी मंदिर में सिंहासन पधराकर सम्पन्न होती है। यह इस मान्यता को प्रदर्शित करती है कि जामनगर (गुजरात) स्थित खेजड़ा मंदिर से श्री प्राणनाथ जी ने अपनी जन जागरण यात्रा प्रारंभ की थी और वह सच्चिदानंदीय सत्ता यहाँ श्री बंगला जी में विराजमान हो गई है। श्री गुम्मट जी मंदिर के द्वार के ऊपरी शिखर में तत्कालीन प्लास्टर से यह अंकित भी है-

''ब्रज, रास और जागनी लीला तथा नौतनपुरी लीला भई है परना माहें ।।''

महामति श्री प्राणनाथ तो स्पष्ट कहते हैं- 'सब जातें मिलीं एक ठौर, कोई न कहे धनी मेरा और।'

पन्ना बुंदेलखण्ड अंचल का हृदय क्षेत्र है। महामति प्राणनाथ और उनके अनन्य शिष्य श्री छत्रसाल महाराज की स्मृतियाँ यहाँ के कण-कण में समाई हुई हैं। यहाँ की पुण्य भूमि से हीरे निकलते हैं और यहाँ की हवाओं में राधा कृष्ण की परमभक्ति के गीत सदा गूँजते रहते हैं। प्रणामी धर्म में श्री मेहराज एवं उनकी अर्द्धांगिनी तेजकुँवरि जी को श्री प्राणनाथ एवं श्री बाईजूराज के रूप में साक्षात श्याम-श्यामा का स्वरूप माना जाता है। प्रणामी धर्म श्री कृष्ण भक्ति परंपरा का सर्वोच्च शिखर है, जिसमें अनन्य परा प्रेमलक्षणा भक्तिमय पूजा-अर्चना होती है। मान्यता है कि ब्रह्मधाम से सखियाँ स्मृति रूप में बृजलीला, रासलीला और कलियुग में दुख की लीला देखने के लिए संसार में अवतरित हुईं। पराप्रेम लक्षणा भक्ति द्वारा इस दारुण दुखमयी संसार से मुक्त होकर वे सखियाँ पुनः अपने धाम में जागृत होंगी, यही उनकी मुक्ति है और साधना का परम लक्ष्य भी। इस परम सत्य की पहिचान महामति प्राणनाथ जी के महाग्रंथ 'श्री तारतम सागर' से होती है जिसका अध्ययन, मनन और चिंतन मानव जीवन को सार्थकता प्रदान करता है।

निजानंद संप्रदाय में कुछ शब्दों के पर्यायवाची रूप प्रचलित हैं, जिन्हें जानकर समझकर ही प्रणामी धर्म के मर्म को भलीभाँति हृदयांगम किया जा सकता है। श्री मेहराज ठाकुर (इंद्रावती सखी) महाप्रभु प्राणनाथ, जो पूर्णब्रह्म परमात्मा अनादि अक्षरातीत श्री कृष्ण स्वरूप हैं उन्हें आदर पूर्वक श्री राज, श्री राजजी महाराज, श्री जी साहेब जी, धनी जी, धाम के धनी आदि नामों से स्मरण किया जाता है। राधा-कृष्ण को श्यामा-श्याम, महाप्रभु के शिष्यमण्डल को सुंदरसाथ, महामति प्राणनाथ प्रणीत महाग्रंथ तारतम सागर को श्री मुखवाणी, श्री कुलजम स्वरूप, बेहद वाणी, पंचम वेद, स्वसंवेद आदि, महामति श्री प्राणनाथ जी के विस्तृत जीवन वृत्तांत को 'बीतक' कहा जाता है। गोटा-वह पुस्तक है जिसमें नित्य सेवा-पूजा पद्धति प्रकाशित है। प्रणामी धर्मानुयायियों में शिष्टाचार के रूप में दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम कहने की परंपरा है। सनातन धर्म के उच्चतम शिखर के रूप में श्री निजानंद संप्रदाय प्रतिष्ठित है, इस विश्वास के साथ कि 'श्री कृष्णप्रणामी न पुनर्भवाय' अर्थात श्री कृष्ण को प्रणाम करने वाले पुनः जगत में लौटकर नहीं आते।

आज विशाल जनसमूह लगातर श्री कृष्ण प्रणामी धर्म से जुड़ता चला जा रहा है। आपके लिए भी यह शुभ अवसर है, पराप्रेम लक्षणा भक्ति में सराबोर होने का। महामति प्राणनाथ कहते हैं-

सोता होय सो जागियो, जागा बैठा होए। बैठा ठाड़ा होइयो, ठाड़ा पांव भरे आगूं सोए ।।

प्रकाशक - श्री 108 प्राणनाथ जी मंदिर ट्रस्ट, धाम, पन्ना (म.प्र.)

Sun of the Words

The Light of Truth

The Journey to the Infinite

Nijananda Sampradaya

(Shri Krishna Pranami Dharma)

&

The Celebrated Temples of

Shri 5 Padmawatipuri Dham, Panna

A BRIEF INTRODUCTION

NIJANANDA SAMPRADAYA

(Shri Krishna Pranami Dharma)

Born in Umarkot, Shri Devchandra (1581-1655 A.D.) studied all the contemporary religions and faiths exhaustively; and he, having mastered the various systems of SADHANA i.e. spiritual disciplines completed his dicovery of truth. At Jamnagar, he went through the devoted contemplation delving into the great scripture : 'Shrimad Bhagwat' continuously for fourteen years. Ultimately the realisation of PURNA-BRAHMA-PARMATMA : SHRI KRISHNA, through PARA-PREM-LAKSHANA-BHAKTI was attained by him. Thus, Shri Krishna in His SAT-CHID-ANAND form entered into the innermost being of Devchandra Ji after which the latter got renowned as NIJANAND SWAMI. As he attained to the Purna Brahma Shri Krishna through NIJ-BODH i.e. self enlightenment, so his path of devotion came to be known as Nijanand sect, which with the passage of time became synonymous with "Shri Krishna Pranami Dharma."

Shri Mehraj Thakur was born at Jamnagar (Gujrat) in 1618 A.D. He became the unique desciple of Shri Nijanand Swami. After taking initiation from Nijanand Swami Shri Mehraj Thakur indulged in perseverant Sadhana as a result of which he too attained self enlightenment. Shri Nijanand Swami, whose being was integrated with Krishna, left his mortal vesture in 1655 A.D. and got seated in the being of Shri Mehraj Thakur with all the powers of Shri Krishna. Thenceforth Shri Mehraj Thakur was known as Mahamati Prannath. Mahamati Prannath undertook many journeys both in and outside India to propagate his mission of Universal Awakening. Heralding the coming era of human liberty, he came to Bundelkhand accompanied with the five thousand of his followers. Here, Shri Chhatrasal the lion among the bravest of man, having been convinced of the Supreme realization of Mahamati Prannath, became his disciple.

The environmental suitability of Panna state in Bundelkhand overwhelmed Mahamati Prannath who chose to settle down here alongwith his followers in order to make this place the centre of his further actions. On the 4th day of the Indian month of Shravan in 1694 A.D. Mahamati Prannath like a drop engulfing an occean ascended to immortality. His being identified with Purna Brahma Shri Krishna bore the name of PRANNATH, which means the Lord of all souls.

The main two temples under the names of Shri Banglaji and Shri Gummatji here were built up during the period of the physical presence of Mahamati Prannath, who, after his NIJ sadhana in the calm and serene atmosphere of which, used to expound his teachings to his followers including Shri Chhatrasal as well as the people of Panna state. Mahamati Prannath was indentified with the Supreme God. Therefore this place was called NIJ-DHAM and the dwellers of Nij-Dham were called Dhami. Since then this place has been renowned as the MUKTIPEETH or the seat of liberation also. This powerful system of Para-Prem-Lakshna-Bhakti (Devotion characterised by Transcendental Love) emanating from Nijanand Swami, was made to overflow the world by Mahamati Prannath in the form of Nijanand Sampradaya or Shri Krishna Pranami Dharma. Panna of Bundalkhand became the originating centre of this stream. It was at this holy place that the intuitive descent of 18758 verses of the great scripture "Tartam Sagar" vocalized by Mahamati Prannath were collected and edited.

In the Nijanand philosophy, Shri Krishna, the Lord of sweetened bliss, is the only object of worship, to enshrine whom in one's heart by Para-Prem-Lakshna-Bhakti with Sakhi-Bhav, consonent with "Pativrata-Dharma", i.e. single minded devotion for one's spouse is the sole aim and the practical path to achieve this aim is the 'Seva-Puja' i.e. service cum worship for 'Ashta-Pahar' i.e. for the whole day divided into eight time- units of three hours each. Here the word service is significant, which implies that the living presence if Purna Brahma Shri Krishna prevails here constantly who is served as well as worshipped. In this way the Nijanand Sampradaya

founded by Nijanand Swami Shri Devchandra Ji and perfectly expounded by Mahamati Prannath has been flooding the whole world with the overflowing stream of Para-Prem-Lakshna-Bhakti in the form of Pranami religion. At present there are about 500 Shri Krishna Pranami Mandir and above one crore of its followers in the world. This life is one of the rarest opportunity to dissolve one's ego in the Para-Prem-Lakshna-Bhakti of Purna Brahma Shri Krishna. Those who miss this opportunity do return to this world of suffering again and again, while those who realise the value of this inestimable opportunity do justify their life and attain the PARAMDHAM of the Purna Brahma Parmatma i.e. the own abode of the Supreme Lord. Mahamati Prannath recognises only Love to be the best way to attain to the Supreme Lord; hence his urge to all the understanding persons (wisdom seeker) has been to attain to the highest abode of the Supreme Lord by going beyond all the Karma-Kand and devoting wholly to love Shri Krishna, the SAT-CHID-ANAND. Mahamati says : the highest wisdom is that which stimulates the love for Shri Krishna.

Mukti Dham Shri Gummat Ji Mandir

The construction of this temple was completed in 1688 during the physical presence of His Infinity the Lord Prannath, with the concerted efforts of Shri Chhatrasal, the most distinguished disciple of Mahamati and all the rest of his followers. This was the temple, wherein Mahamati used to meditate and ultimately cast his physical vesture here. In Nijanand Sampradaya, Shri Krishna, the Lord of sweetened bliss is the object of worship, therefore on the front hub, the presence of Shri Krishna, the bliss incarnate, is envisioned through the symbols of his flute, diadem, and attire.

In the Nijanand philosophy the living presence of Purna Brahma Parmatma is to be felt in the 'Tartam Sagar' which was given to the world through Lord Prannath. Shri Krishna, at the time of his leaving Brijmandal, gifted the set of his flute, diadem and attire as the representative of his bliss aspect to the Gopies in order to relieve their pangs of seperation, instructing them to feel His presence in those symbolic objects. In the very same way Lord Prannath at the time of His holy, transit from the mortal vesture gifted Tartam Sagar to His disciples saying "You may always find me in this scripture." So these two mementoes, namely the Tartam Sagar and the set of flute, diadem and attire altogether constitute the perfect form in which Lord Prannath alias Purna Brahma Parmatma, Shri Krishna lives; because Lord Prannath in His self enlightened state was identified with Shri Krishna and so we realise Lord Prannath and Shri Krishna as one, in this representative form of sweetened bliss. This land of Panna has been acknowledged as an extension of the holy land of RAAS and that of the Lila (the divine sport) of Brijmandal, so it is the firm faith of the devotees that this place harbours the living presence of Purna Brahma Shri Krishna and Lord Prannath in a single form. It is therefore that not only worship, but the service sum worship for all the eight PAHARS of the day is performed here with the feeling that right from morning to midnight we serve and worship our most beloved Lord. All the festivals of the tradition

of the path of devotion to Shri Krishna are celebrated here with the strong faith and feeling that Shri Krishna Himself alongwith His Gopies is present in every celebration of the festival. One can gain an unforgettable spiritual experience by sitting calmly for some time in his temple and getting absorbed in the feeling of the presence of Shri Krishna and Lord Prannath.

Shri Bangla Ji Mandir

Shri Bangla Ji Mandir was built up in 1683 A.D. by Lord Prannath as the live heart around which the further establishment of Panna town was to be developed by and by. At the time of Lord Prannath this Banglaji Mandir was roofed with timber and hay and later on it was given the present structure by Maharaj Sabha Singh, the grand son of Maharaj Chhatrasal. Then the disciples of Lord Prannath the 'Sundersaath' having devoted their body, mind and wealth, further added to its magnificence. Since Lord Prannath used to expound the gread truths to the assembly of his disciples, over here, so it was also known as 'Sansad Bhawan' or parliament building. Even today the same old tradition is being followed in that the expositions on Tartam Sagar, singing of devotional songs and congragational programme are held here. The cot-seat (Takhat) of sandal wood on which Lord Prannath sat to deliver his preachings is still present in this temple and it is now on that historical cot that the Tartam Sagar clad with the attire and diadem with flute is seated representing Shri Krishna to whom the service cum worship is offered on the eightfold time-unites of the day. This temple is the official court of the Purna Brahma Parmatma to whom the devotees submit their applications mentally. It is a matter of common experience that nobody returns unfulfilled from here. Shri Krishna, the Sat-Chid-Anand grants fulfilment to the desires of each and all applicants. All the festivals of the tradition of the path of devotion to Shri Krishna are celebrated with great earnestness here; especially the five days programme of 'Sharad Purnima' is celebrated very magnificently, when the Deity is led in a grand procession to be seated in the 'Raas Mandal' situated just beside the Bangla Ji Mandir. This five-days celebration of Sharad Purnima assumes international magnitude, as the 'Sundersaath' from U.S.A., Canada, U.K., Australia, Nepal, Bhutan etc. throng here. The erudite orators arriving here from distant places deliver inspiring talks and the different groups of artists display Raas-dances and other elevating art-feats.

The Open Hand in Blessing Gesture

The whole area of the wide expanse in which Shri Gummat Ji and Shri Bangla Ji Mandir are situated is known as the 'Brahma-Chabootara.' Here Lord Prannath....and his accompanying followers have, for year after year staged the sweet and blissful `Lila' of Purna-Bramha Parmatma Shri Krishna with music, singing, dancing, and acting. This is the land of austerity, where various 'Brahma-Munies', having reached the culmination of their `Sadhna', austerity and devotion gained the experience of the Supreme Truth. When Mehraj Thakur through awakening of his highest self became Mahamati Prannath, then five divine powers, bestowed upon by Purna Bramha Parmatma got seated

into him. The symbol of these five powers is the open palm in the blessing gesture, which is visible as placed on the golden cupola (Kalash) on the dome of the temple, and is reverentially called `Shri Panja Sahib'. In fact, Lord Prannath has been raining prosperity over the whole world by his blessing hand. The remembrance of this blessing hand gives us the assurance of being secure under the infinite shelter of Purna Brahma Parmatma whose grace has been symbolised in it, under whose protection we obtain the confidence to conquer over all kinds of difficulties and struggles.

The miracle making iron-bangle of Laxmidas Ji

Shri Laxmidas (Lachchhidas) was a very devoted disciple of Mahamati Prannath. He possessed a priceless philosphers gem, whose mere touch could convert a baser metal into gold. He wanted to reconstruct the holy temple of Lord Prannath as a golden temple with the help of that gem. The Lord, one day, explained to him that the conscience of people in future would not remain pure, i.e. it would become adulterated with greed etc, so to build a golden temple was not proper. Yet the attachment of Laxmidas Ji with that miraculous gem could not be subsided as he wanted to earn fame by building a magnificent temple by means of it. One day Lord Prannath, having taken that miraculous gem from him, threw it away in the river `Kilkila'. This event made Laxmidas ji very very sad. Then Lord Prannath in order to free him from the attachment, lifted up a corner of his seat -cloth, under which hundreds of similar gems were lying scattered. Seeing this the inner sight of Laxmidasji got opened and he begged the pardon of the Lord Prannath again and again. Lord Prannath then took the iron bangle which Laxmidasji wore on his arm and and got it hung on the eastern gate of the temple uttering the blessed boon that the iron bangle thenceforth would work such miracles as no golden ornament could ever be capable of. The iron bangle would destroy all the three-fold pains of the world. Whosoever would touch it with his forehead, offer incence to it bathe it and drink that water, his / her troubles whatsoever they might be, would vanish. Thus the fame earned by your (Laxmidasji's) name by dispelling the sufferings of the distressed people would be everlasting and worthy. Since then the iron bangle has become renowned as the miracle making bangle of Laxmidasji.

The monuments (Gumties) of the devoted saints

some ardently devoted disciples of Mahamati Prannath had expressed their desire always to remain close in proximity to their lord. They wished that their constant services at the feet of the Lord may continue for ever. So they determined to remain ever present on the `Brahma-Chabootra'. The firm faith of theirs turning into common belief has everlastingly manifested in the form of these Gumties.

We still today remember and feel the presence of those devoted disciples of Lord-Prannath in these monuments namely Swami Laldasji, Swami Mukund das ji, alias Navarang Swami, Sushila Maharani alias Majhali Rani, and Maharaj Mardan Singh. Thus the circumambulation of the `Brahma-chabootra' is studded with these monuments (Gumties), whereto the leavings of the food-dish (thal-bhog) of Lord Prannath are sent everyday.

The Temple of Sadguru Shri Devchandra Ji

His infinity the Lord Prannath carrying the preceptor's throne (Guru-Gadi) of his Guru Shri Nijanandacharya Dhani Dev chandra Ji-(1581-1655 A. D.) came to Shri 5 Padmavatipuri and the responsibility of serving the same was given to the Brahmamuni Shri Jayanti Kaka. Here too the service cum worship is offered to Shri Krishna in the form of Satguru Shri Dev Chandra Ji, because after Shri Dev Chandra Ji devoted himself constantly for 14 years in listening to Shrimad Bhagwat in the temple of Shyamji the Purna Brahma Shri Krishna Himself got enshrined in the depths of his being.This temple was given its present magnificient form by Shri Bhoosan Das Ji Dhami.

Shri Baiju Raj (Radhika-Maharani) Ka Mandir

This temple was brought into existence in 1693 A.D. to enshrine the holy presence of Shri Baiju Raj, an epithet of Shyamaji and the spouse of His infinity the Lord Prannath whose earthly name was Tej Kunwari Ji . The Pranami people regard Baiju Raj and Radhika ji as identical so her manifestation-ceremony is celebrated in a majestic way on the 8 th bright luner day of the Hindi month of `Bhadon'. The construction of this magnificent temple was implemented by Brahmamuni Shri Vanshavatansha Seth Bhushan Das Dhami.The followers of Parnami Dharma and other devotees, even to this day, supplicate with solemn vows in this temple and get the fulfilment of their longings.Her grace is limitless.This place is vibrant with super consciousness.

◆

The whole area of the holy place in Panna town, where the four main temples of Nijananda Sampradaya (Pranami Dharma) are situated is known as 'Parna- Paramdham', or 'Dham' and also as `Shri 5 Padmavatipuri Dham'. Here the Lila of `Brij' and `Barsana' both are entrenched, therefore the area near Baijuraj Mandir represents `Barsana', whereas that around Gummat Banglaji mandir represents `Brij- Bhoomi'. This feeling becomes overwhelmingly manifest on the occasion of Holi festival. All the festivals directly related to Radhika Ranijl are celebrated with great devotional zeal at Baijuraj Maharani temple, whereas those ones directely related to Shri Krishna at Brij Bhoomi. At Panna Paramdham, Shri 5 Padmavatipuri Dham or Muktipeeth Dham which is the greatest among the places of pilgrimage of Nijananda Sampradaya, as per the common belief of the people the Poorna Brahma Shri Krishna and his power -aspect Shyama Maharani (Radhika ji) are present in full form here, so there are seperate residences, temples and service cum worship for them. In all the places, other than this `Dham' wheresoever the temples of Nijananda Sampradaya, known as Shri Krishna Pranami Mandir are situated there the service cum worship is offered jointly to the couple -form i,e. Radha-Krishna.

Chopra Mandir

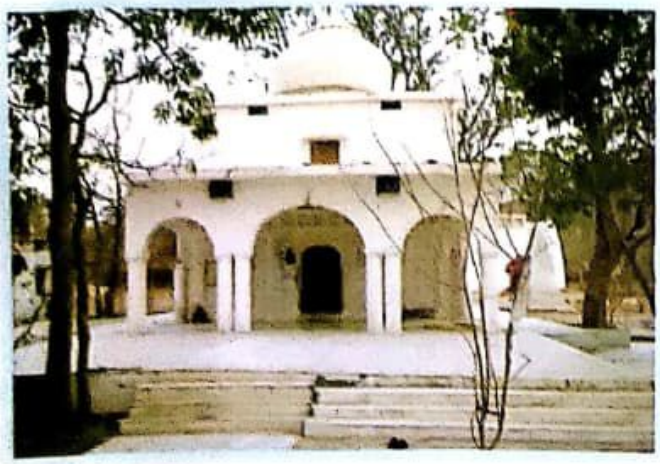

This temple is that sacred place, to which Maharaj Chhatrasal in 1683 A.D., having recognised his Sadguru Shri Prannathji as the Purna Brahma, brought him from the Amrai Ghat of the river Kilkila bearing his palanquin on his own shoulders, and in his welcome spread his turban with the `Sari' of his Rani for being trodden upon by Lord Prannath from the main gate upto his seat in the temple. Thereafter Maharaj Chhatrasal, worshippingly led the first Arti-Ceremony of Lord Prannath. This is the great penance-grove, where the extreme devotional Sadhana of many Brahmamunies compelled the concrete appearance of Purna Brahma Parmatma before them. It was in the hind residential portion of this temple that Kunwar Hridayashah, the son of Maharaj Chhatrasal was born. Near this temple, there are two rectangular ponds under the names Ganga and Yamuna. The water whereof has great medicinal value and is good for health. This beautiful grove is even to this day being felt as charged with peace, tranquility and the atmosphere of Sadhana.

Khejara Mandir

This sacred place is named after the `Khajara' or `Shami' tree which stood here and His Infinity the Lord Prannath used to visit this place occasionally. This place made a golden page of history, when Shri Prannathji having performed the coronation of Chhatrasal ji over here proclaimed him as the Maharaja Chhatrasal. On the occasion of Vijayadashmi day in 1685 A.D. Swami Prannath bestowing the boon of diamonds upon Chhatrasal ji got him take the betal-pack as the vow for committing himself for ever for the prosperity of his subjects as well as for protecting the religion. Lord Prannath gave his blessings to Maharaja Chhatrasal along with a sword to gain victory in all the future battles and indeed thereafter Maharaja Chhatrasal with revered remembrance of the Lord and the blessed sword in hand had easily defeated many valiant generals of the Mogal-Army. As time went passing by a temple was erected at this sacred place, commemorating the historical events, which is known as the Khejara-Mandir.

The tidings that the Lord Prannath granted the boon of diamonds to Maharaja Chhatrasal on the day of Vijayadashami spread soon throughout the state and the people began to pick up casually the diamonds even from the surface level of the land. So all the people of the state headed by Maharaja Chhatrasal arrived at this place on the thirteenth day of the fortnight in order to offer their gratitude unto Lord Prannath, after which they formed a huge procession to escort the Lord, who was greeted and worshipped at every passing door, reaching finally the Banglaji-temple at Padmavatipuri Dham. Thenceforth the tradition of the descendants of Maharaja Chhatrasal taking the betal-pack as the vow and receiving the sword from the representative of the Prannath Mandir at Khejra Mandir on Vijayadashmi day every year has been prevailing even to this day.

1- The Sufi tradition in Islam i.e. their path of love, the declaration by Jesus Christ that "Love is God" the immortal words of Mahavir that `Nonviolence is the supreme religion' the commandment of Lord Buddhathat "Be a lamp unto thyself", the firm belief of the Sikkha-faith that ` the Guruvani is Brahma, so it is worshippable as such" all these truths inherent in various faiths are already assimilated and followed in Nijananda Sampradaya one of its main tenets being the parity of all religions. Mahamati Prannath very emphatically describes what he foresaw that all the differences in births (casts, faiths etc.) got integrated at one stage and none proclaims its favourite god to be other than the One."

◆

2- Panna is the very heart of Bundelkhand region. The memories of Mahamati Prannath as well as those of his devout disciple Maharaja Chhatrasal are pervaded in every particle of this place. This holy land breeds diamonds and the air of this place is vibrant with the songs of the Para-bhakti to Radha-Krishna. In Pranami religion Shri Mehraj Thakur and his spouse Tej Kunwari ji are regarded as Shyam-Shyama incarnate in the form of Shri Prannath and Shri Baiju Raj. The Pranami religion is the top most pinnacle of the tradition of the path of devotion to Krishna, in which the worship is performed with 'Sakhi-Bhav' the assumption is that the consciousness of the Sakhies from 'Brahmadham' descended to see the Brij-Lila, Raas-Lila and finally the Lila of pain in this world. These Sakhies by means of 'Para Prem Lakshna Bhakti' would be relieved of this agonising pain to wake-up again in their native Dham and this varily is liberation as well as the chief aim of Sadhna too. The knowledge and the experience of this truth issues from 'Tartam Sagar' by Mahamati Prannath the study, contemplation and the constant vision of which gives meaningfulness to human life.

◆

3- In Nijananda Sampradaya, the synonyms of some important terms are in vogue, by fully knowing and understanding them alone, the core of Pranami religion can be assimilated. For example, Shri Mehraj Thakur (Indravati Sakhi) Mahaprabhu Prannath who is essentially the same as Purna Bramha Parmatma Shri Krishna, is reverentially addressed as `Shri Raj', Rajji Maharaj, `Shriji Sahib', `Dhani ji' `Dham Ke Dhani' etc. `Radha-Krishna' is synonymous to `Shyama-Shyam', the disciples of Mahaprabhu as `Sundersaath' the great scripture, which is regarded as the sound form of Mahamati Prannath bears the various names e.g. `Tartam Sagar', `Shri Mukhvani', Shri Kuljamsaroop', `Behad-Vani, `Pancham-Ved', `Swasamved' etc. The `Beetak' literally means the happenings of the past time, which is the detailed biography of Mahamati Prannathji. The 'Gota' is that book in which the system and methodes of daily-worship-cum-service are recorded. Among the followers of Pranami religion the traditional custom of greeting each other consists of uttering the word `PRANAM' with folded hands and heartful of love.

◆

Shri Nijananda Sampradaya exists in the form of the highest peak of Sanatan Dharma. A great many people have constantly been drawn to join the folds of Shri Krishna Pranami Dharma with the conviction that 'Shri Krishna Pranami Na Punarbhavaya', meaning that those who offer themselves in Pranam to Shri Krishna are freed from the cycle of birth and death, in this world. For you too this rare opportunity of being soaked in Para Prem Lakshna Bhakti offers Invitation ,Mahamati Prannath says-

"May those who sleep, wake up. Those who are awake, sit up.
Those who are sitting, stand up. And those who stand, stride and surpass."

आलेख: अश्विनीकुमार दुबे अंग्रेजी अनुवाद: अम्बिका प्रसाद खरे
प्रकाशक: श्री 108 प्राणनाथ जी मंदिर ट्रस्ट, धाम, पन्ना (म.प्र.)